RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-02
Issue-09
September-2017
ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com

आधुनिक कविता में ग्रामीण जीवन : बदलते परिदृश्य का प्रभाव

डॉ. रतन कुमारी वर्मा

एसोशिएट प्रोफेसर एवं पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, जगत तारन गर्ल्स, पी.जी. कालेज, इलाहाबाद

भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारत की अधिकांश जनता गाँवों में निवास करती है। देश की आजादी के पूर्व गाँवों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति अत्यन्त खराब थी। उनकी स्थिति खराब होने के पीछे सबसे बड़ा कारण था उनका आर्थिक शोषण। अपनी फसल की उपज का अधिकांश भाग उन्हें कर के रूप में देने को मजबूर होना पड़ता था। देश आजाद हुआ। किसानों की थी उम्मीदें बढ़ी। अब हमारी भी स्थिति में सुधार होगा। लेकिन आज तक उनकी स्थिति में सुधार नहीं हुआ है। अपितु दिन–प्रतिदिन उनकी स्थिति निरन्तर खराब ही होती जा रही है। किसानों की सामाजिक तथा आर्थिक दशा का ग्रामीण जीवन का चित्रण विभिन्न विधाओं में साहित्यकारों ने किया है। अगर गद्य साहित्य में कहानियों, उपन्यासों के माध्यम से उनका जीवन चित्रित हुआ है। तो कवियों ने कविताओं में विशेषरूप से आधुनिक कविता में ग्रामीण जीवन का सम्पूर्ण परिदृश्य चित्रित हुआ है।

हिन्दी साहित्य के विभिन्न साहित्यकारों ने ग्रामीण जीवन का खूब चित्रण अपनी रचनाओं में किया है। जिससे हम भारत के गाँवों की तस्वीर को समझ सकते हैं। गाँवों में पहले से ही अशिक्षा, गरीबी, भुखमरी, स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव रहा है। अपनी सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए ही मजदूर गाँव से शहर आता है। उसकी सबसे बड़ी समस्या है कि गाँव में रोजगार का बहुत अभाव है। अब उसकी समस्याओं का कैसे समाधान हो। भारत के गाँवों की तस्वीर को कविता, कहानी, उपन्यास प्रत्येक विधा में देखा व समझाा जा सकता है। विश्व साहित्य के स्तर पर मुंशी प्रेमचन्द का 'गोदान' उपन्यास उत्तर भारत के ग्रामीण जीवन, किसानों की दशा का दस्तावेज माना जाता है। कृषक जीवन का महाकाव्य माना जाता है। मुंशी प्रेमचन्द के अन्य उपन्यासों एवं कहानियों में भी ग्रामीण जीवन का वड़ी ही सूक्ष्मता से चित्रण है। रंगभूमि, कर्मभूमि, में भी किसानों की स्थिति का विस्तार से वर्णन है। जब देश आजाद नहीं हुआ था, तब भी देश में किसानों की स्थिति अच्छी नहीं थी। फणीश्वर नाथ रेणु ने 'मैला आँचल' तथा 'परती परिकथा' में बिहार के पूर्णिया जिले के जीवन को जीवन्त बनाया है। प्रेमचंद की कहानियों में भी कफन, पूस की रात, ठाकुर का कुँआ, पंच परमेश्वर, अलग्योझा, बूढ़ी काकी अनेक बहुत प्रसिद्ध रचनायें हैं जिनमें ग्रामीण जीवन सांस लेता है उसमें जीवन की कष्टमय अविरल धारा बहती है। आधुनिक कविता के कवियों ने भी ग्रामीण जीवन तथा संस्कृति का चित्रण अपनी रचनाओं में किया है जिनमें अरूण कमल, केदारनाथ सिंह, बाबा नागार्जुन, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, निराला, पन्त, रघुवीर सहाय, दिनकर की प्रसिद्ध कविताओं के माध्यम से भारत के गाँव की तस्वीर को समझा जा सकता है। इस क्रम में सबसे ज्यादा प्रसिद्ध कविता है निराला की– 'वह तोड़ती पत्थर'। इसमें एक श्रमशील, आत्मसम्मान से युक्त नारी का चित्रण है– 'वह तोड़ती पत्थर'।

देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर
वह तोड़ती पत्थर।
कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार,
श्याम तन, भर बँधा यौवन
नत नयन, प्रिय कर्म रत मन
गुरू हथौड़ा, हाथ,
करती बार–बार प्रहार
सामने तरूमालिका अट्टालिका प्राकार।
.... मैं तोड़ती पत्थर''[1]

निराला जी 'बादल राग' कविता में किसान की दशा का चित्रण करते हुए लिखते हैं–

''जीर्ण बाहु है शीर्ण शरीर
तुझे बुलाता कृषक अधीर
ऐ विप्लव के वीर!
चूस लिया है उसका सार
हाड़ मात्र ही है आधार
ऐ जीवन के पारावार!''[2]

समाज में किसानों का हमेशा शोषण हुआ है। चाहे वह ब्रिटिशकालीन भारत का किसान हो या आज का किसान। उसकी न तो आर्थिक स्थिति सुधर पाती है न सामाजिक। आर्थिक स्थिति से ही सासाजिक स्थिति में बदलाव आता है। चाहे 'गोदान' का 'होरी' हो या निराला के अनुभव एवं कल्पना का किसान। सभी किसानों की स्थिति एक जैसी ही है। शोषक वर्ग उसका शोषण करके हाड़ मात्र ही उसके पास छोड़ता है कि वह जिन्दा रह सके। उसके

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

शरीर की ताकत को यह समाज चूस लेता है। किसान का हमेशा आर्थिक शोषण बहुत होता है। किसी भी राजनीतिक पार्टी का शासन हो, वोट के लिए राजनीतिक पार्टियाँ किसानों को याद करती हैं। वोट मिल जाने के बाद भूल जाती हैं पाँच वर्ष के लिए। देश की आजादी से आज तक अनवरत सिलसिला यही चला आ रहा है। निराला ने 'झींगुर डटकर बोला' कविता में जमींदार, साहूकार, शासन, सत्ता के बीच पिसने वाले किसान का भी चित्रण किया है।

झींगुर ने कहा,
"चूँकि हम किसान सभा के,
भाई जी के मददगार
जमींदार ने गोली चलवाई
पुलिस के हुक्म की तामीली की।
ऐसा यह पेंच है।"[3]

जब देश आजाद नहीं हुआ था, तब देश के जमींदार, साहूकार ने किसानों का शोषण किया। शासन और सत्तसा ने भी हमेशा उन्हीं का साथ दिया। पुलिस भी शोषणकारियों का साथ देने का हिस्सा बनती रही। आज भी स्थिति वही है। किसानों, मजदूरों के साथ शासन, प्रशासन, सत्ता, पुलिस के व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं आया है। इनकी बात को कोई नहीं सुनता है। इनसे केवल अपने मनोनुकूल कार्य करवाये जाते हैं।

सुमित्रानन्दन पन्त अधिकांशतया अपने प्रकृति प्रेम के वर्णन के लिए जाने जाते हैं। पहाड़ी जीवन का अप्रतिम दृश्य उन्हें सदैव आकर्षित करता था। यही कारण है कि प्रकृति प्रेम पर उन्होंने बहुत सुन्दर रचनायें लिखीं। जिनमें 'नौकाविहार' कविता उनकी पाठ्यक्रमों में पढ़ाई जाती है। कालाकांकर, प्रतापगढ़ के राजप्रसाद में रहते हुए उसका जो चित्रण किया है, वह अनुपम है। लेकिन मानवता के लिए, भारतमाता की स्थिति का चित्रण भी बड़ी संवेदना से किया है। इस दृष्टि से उनकी कविता 'भारतमाता' तथा 'ताज' विशेष उल्लेखनीय है जिसमें पूरे भारतवर्ष का ग्रामीण जीवन, उसकी स्थिति साफ दिखाई देती है। 'भारत माता' कविता की पंक्तियाँ हैं–

"भारत माता
ग्राम वासिनी!
खेतों में फैला है श्यामल,
धूल भरा मैला सा आँचल,
गंगा–यमुना में आँसू जल
मिट्टी की प्रतिमा
उदासिनी!"[4]

भारत माँ गाँवों में बसती हैं। उनका चित्र कैसा है? वह कितना दुखी है, क्यों दुखी है यह तब भी चिन्ता का विषय था और आज तो और भी चिन्ता का विषय बन गया है। जब पन्त जी ने यह कविता लिखी थी तब देश आजाद नहीं हुआ था। भारत की जनसंख्या तब तीस करोड़ थी और अब लगभग सौ साल बाद जनसंख्या में अपार वृद्धि हो चुकी है। इसलिए समस्यायों में भी बहुत वृद्धि हुई है। जहाँ 'ताजमहल' प्रेम का प्रतीक माना जाता है, दुनिया ताजमहल का दीदार करने आती है। उसी ताजमहल को देखकर पन्त जी के हृदय से कैसी कविता फूटती है। उसका चित्र 'ताज' कविता में देखिए– "

"हाय! मृत्यु का ऐसा अमर, अपार्थिव पूजन? जब विषण्ण, निर्जीव पड़ा हो जग का जीवन। रत्न–सौंध में हो श्रृंगार मरण का शोभन, नग्न, सुधातुर वास विहीन रहें जीवित जनन"[5]।

भारत की जनता का ऐसा आर्थिक शोषण हो, और वह गरीबी में जीवन जीने को विवश हो यह मानवता के लिए बहुत शर्मनाक है। हमें उनकी स्थिति में सुधार के लिए अब तो प्रयत्न करना चाहिए। देश आजाद है, केन्द्र में सरकार बहुमत में है। वर्तमान दशा की बेरोजगारी है, उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति को मजबूत करने वाली नीतियों का जमीनी स्तर पर कार्यान्वयन होना चाहिए। रामधारी सिंह 'दिनकर' राष्ट्रीय कवि हैं। उनकी कविताओं में 'राष्ट्रप्रेम' की भावना प्रधान है। ओज के कवि हैं। लेकिन वे भी किस तरह आम किसान की पूजा करते हैं, देवता मानते हैं। 'जनतंत्र का जन्म' कविता में पूज्य किसान का वर्णन देखिए–

"आरती लिये तू किसे ढूँढ़ता है मूरख
मंदिरों, राजप्रासादों में, तहखानों में?
देवता कहीं सड़कों पर गिट्टी तोड़ रहे,
देवता मिलेंगे खेतों में खलिहानों में।"[6]

दिनकर के शब्दों में किसान देवता है। वे ही हम सबका अन्न से भरण पोषण करते हैं। वह कर्म के देवता हैं। मन्दिर, मस्जिद, राजप्रासाद में वे नहीं रहते हैं। उनसे आप खेतों में, खलिहानों में, सड़क पर गिट्टी तोड़ते हुए मिल सकते हैं। हमें उनकी पूजा करनी चाहिए। उनके श्रम का सम्मान करना चाहिए। ढोंग, पाखंड से दूर रहना चाहिए। भारत की आर्थिक दशा सुधारने के लिए जब तक हम किसानों की हितकारी, लाभकारी नीतियों का निर्माण नहीं करते हैं, तब तक उनकी स्थिति में सुधार नहीं हो सकता है। सरकार के द्वारा किसानों को जो फसल बीमा या सब्सिडी या ऋण प्रदान किया जाता है, वह 'ऊँट के मुँह में जीरा' जैसा उनके पास पहुँचता है। इतना अल्प आर्थिक प्रयास उनकी स्थिति को मजबूत बनाने में सहायक नहीं हो सकता है।

अज्ञेय जी पर व्यक्तिवादी चेतना से अनुप्राणित होकर रचनायें करने का आरोप लगाया जाता है। चार तार सप्तक का प्रकाशन कर प्रयोगवाद को स्थापित किया। उनकी रचनाओं में बहुत विविधता है। जहाँ उन्होंने व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास पर जोर दिया, मनोवैज्ञानिक विश्लेषणवादी रचनाओं से साहित्य को समृद्ध किया, वही

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

उनकी सूक्ष्म दृष्टि को उनकी 'मेरे देश की आँखें' कविता में देखा जा सकता है।–

"वन डालियों के बीच से
चौंकी अनपहचानी
कभी झाँकती हैं वे आँखें
मेरे देश की आँखें
खेतों के पार
मेड़ की लीक धरे
क्षिति रेखा को खोजती
सूनी कभी ताकती हैं
वे आँखें...... ।"[7]

मेरे देश की आँखों में सूनापन है। वह सूनापन क्यों है यह समझने की बात है। जब मनुष्य खुशहाल होता है तो सबसे पहले खुशी की चमक उसकी आँखों में दिखाई देती हैं। भारत देश में किसानों में खुशहाली नहीं हैं।

रघुवीर सहाय की कवितायें व्यवस्था पर पैना व्यंग्य करती हुई आमजन की बात करती हैं। इनको मूलतः राजनीतिक कवि के रूप में जाना जाता है। राजनीति की चाल–ढाल तथा उसकी विकृत निष्पन्तियों के साथ ही मीडिया के तौर–तरीके एवं सामान्य जनता की अत्याचार सहने तथा व्यर्थ के तरीकों से अपने दुःख दर्द को विस्मृत किये रहने पर तीखा व्यंग लिखा है? किसी सामान्य व्यक्ति की हत्या की नोटिस न राजनेता लेता है और न मीडिया। यदि राजनीति का कोई मसला हो तो कत्ल का मसला जोर पकड़ लेता है। सामान्य व्यक्ति की हत्या हो तो उस पर बदचलनी का आरोप मढ़ दिया जाता है। खुशीराम जैसे मतदाता नागरिक की मनोदशा का वर्णन करते हुए लिखते हैं–

"दिन रात सांस लेता है, ट्रांजिस्टर लिये हुए
खुशनसीब खुशीराम,
फुरसत में अन्याय सहने में मस्त।"[8]

सामान्य जनता की जीवन इतना कष्टप्रद क्यों है। सामान्य जन के दुःख–दर्द, उनकी संघर्ष चेतना की कमी, राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था की विसंगतियाँ आम इन्सान को बौना बनाती हैं। उन्हें और कमजोर करती है। स्वतन्त्र राष्ट्र में भी नेता और जनता के बीच संवाद गायब होता जा रहा है। सत्य का पक्षधर अनुचित, असत्य का विरोधी की नजर से देखा जाता है। रघुवीर सहाय की दृष्टि केवल अपने राष्ट्र के नंगे, भूखे व्यक्ति पर ही नहीं है। अपित पड़ोसी राष्ट्र से आने वाले गरीब व्यक्ति पर भी है। गरीबी के कारण यदि कोई नागरिक पैदल सीमा पार करता है तो मार दिया जाता है। दोनों ओर लाशें बिछ जाती हैं, किन्तु दोनों देश के नेता दोस्ती का समझौता करते हैं। सरकारें लाभ के लिए ही संगीनधारियों को दूसरे देश में प्रवेश करा देती है। पंक्तियाँ देखिए–

"पर कोई भूखा पैदन मत आने दो
मिट्टी से मिट्टी को मत मिल जाने दो
वरना दो सरकारों का जाने क्या हो।"[9]

रघुवीर सहाय ने नारी की बेबसी, लाचारी, पारम्परिकता में लिपटी नारी का चित्र अंकित करते हुए लिखा है–

"नारी बिचारी है
पुरूष की मारी है
तन से क्षुधित है
मन से मुदित है
लपककर झपककर
अन्त में चित्त है।"[10]

1959 में 'अभी तक खड़ी स्त्री' में एक ऐसी स्त्री का भी चित्रण करते हैं जिसमें विद्रोह है। वह विद्रोह उसके चेहरे से प्रकट होता है। परन्तु विद्रोह करने का पूरा साहस नहीं आ पाता।

"जब वह घुटने मोड़कर
करवट लेती है
तब देखोगे कि तुम
देख रहे हो कि
उस पर अनय होंगे ही
पर उसका चेहरा उसका व्रिदोह है
यह कितनी कम औरतें जान पाती है।"[11]

इसके साथ ही रघुवीर सहाय जी ने ऐसी भी कवितायें लिखी हैं जिनमें बदलती हुई संस्कृति में मनुष्य के संघर्ष तथा जिजीविषा को पंक्तिबद्ध किया है।

"हमको तो अपने हक सब मिलने चाहिए।
हम तो सारा का सारा लेंगे जीवन
कम से कम वाली बात न हमसे कहिये।"[12]

रघुवीर सहाय ने 1952 में 'पढ़िये गीता' कविता में आदर्श और यथार्थ दोनों की अनिवार्य स्वीकृतियों के बीच नारी जीवन की विडम्बना का चित्र अंकित किया है। हालाँकि अब हर घर में रसोई गैस पहुँच जाने से प्रत्येक स्त्री की स्थिति अब वैसी नहीं है परन्तु आज भी बहुत सी स्त्रियाँ हैं जो आज भी गीता की तरह का जीवन बिताने में अभिशप्त हैं–

"पढ़िये गीता
बनिये सीता
फिर इन सबमें लगा पलीता
किसी मूर्ख की हो परिणीता
निज घरबार बसाइये।
होंठ कॅटीली
आँखे गीली
लकड़ी सीली, तबियल ढीली
घर की सबसे बड़ी पतीली
भरकर भात पसाइये।"[13]

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

'अधिनायक' कविता में आमजन की स्थिति को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं–

"राष्ट्रगान में भला कौन वह
भारत–भाग्य–विधाता है
फटा सुथन्ना पहने जिसका
गुन हरचरना गाता है।"[14]

आम इंसान राष्ट्र का झूठा गुणगान करने को विवश है। उसकी स्थिति पर कोई ध्यान नहीं देता। बस उससे सब अच्छा अच्छा कहलवाया जाता है। 'अकाल' कविता में व्यवस्था का व्यंग्य लिखते हैं– 'जोड़कर हाथ काढ़कर खीस

खड़ा है बूढ़ा राम गुलाम
सामने आकर के हो गये
प्रतिष्ठित पण्डित राजाराम
मारते वही जिलाते वही
वही दुर्भिक्ष वही अनुदान
विधायक वही, वही जनसभा
सचिव वही, वही पुलिस कप्तान
दया से देख रहे हैं दृश्य
गुसलखाने की खिड़की खोल
मुक्ति के दिन भी ऐसी भूल
रह गया कुछ कम ईसपगोल।"[15]

गजानन माधव मुक्तिबोध आम आदमी की पीड़ा को, उसकी असहज स्थिति को "मैं तुम लोगों से दूर हूँ" कविता में व्यक्त करते हैं–

"शून्यों से घिरी हुई पीड़ा ही सत्य है
शेष एवं आवास्तव अयथार्थ मिथ्या है भ्रम है
सत्य केवल एक जो कि
दुखों का क्रम है।
मैं कनफटा हूँ, हेठा हूँ
तेलिया लिबास में पुरजे सुधारता हूँ
तुम्हारी अज्ञाएँ ढोता हूँ।"[16]

एक मजदूर, मिस्त्री, मैकेनिक कैसे अपनी रोजी रोटी चलाता है। वह सदा बड़े लोगो की आज्ञा मानने को बाध्य होता है।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने 'सुहागिन का गीत' कविता में सौभाग्यवती पारम्परिक नारी की छवि, उसकी मनोदशा को अंकित किया है जिसका पति परदेश चला जाता है। ऐसी स्त्री जब पति को जाना होता है तब उसकी क्या स्थिति होती है, उसका चित्रण किया है–

"ड्योढ़ी पर पहले दीप जलाने दो मुझको
तुलसी जी की आरती सजाने दो मुझको
मन्दिर में घण्टे, शंख और घड़ियाल बजे
पूजा की सॉझ–सॅझौती गाने दो मुझको
उगने तो दो पहले उत्तर में घ्रुवतारा
पथ के पीपल पर कर आने दो उजियारा
पगडण्डी पर जल, फूल–दीप धर आने दो
चरणामृत जाकर ठाकुर जी का लाने दो
यह डूबी डूबी साँझ उदासी का आलम
मैं बहुत अनमनी चले नहीं जाना बालम।"[17]

भारतीय नारी में साफ कहकर रोकने की हिम्मत नहीं है। नहीं तो घर कैसे चलेगा। धन कमाने के लिए परदेश जाना ही होगा। पर जाने से रोकने के लिए किस तरह संस्कृतिक क्रिया कलाप के बहाने से रोकना चाहती है। संसार में जितने प्राणी हैं, सभी को भूख लगती है। भूख को शान्त करने के लिए श्रम करना पड़ता है। सक्सेना जी 'भूख' कविता में इस दृश्य को अंकित करते हैं–

"झपटता बाज
फन उठाये साँप
दो पैरों पर खड़ी
काँटो से नन्हीं पत्तियॉ खाती बकरी
दबे पाँव झाड़ियों में चलता चीता
डाल पर उल्टा लटक
फल कुतरता तोता
या इन सबकी जगह
आदमी होता।
जब भी
भूख से लड़ने
कोई खड़ा हो जाता है
सुन्दर दिखने लगाता है।"[18]

'फसल' कविता में आशावादी स्वर को गुंजायमान करते हुए लिखते हैं–

"हल की तरह
कुदाल की तरह
या खुरपी की तरह
पकड़ भी लूँ कलम को
तो भी फसल काटने को
मिलेगी नहीं हमको
हम तो जमीन ही तैयार कर पायेंगे
क्रान्तिबीज बोने कुछ विरले ही आयेंगे
हरा–भरा वही करेंगे मेरे श्रम को
सिलसिला मिलेगा आगे मेरे क्रम को।"[19]

ग्रामीण जीवन की बात हो तो बाबा नागार्जुन की कविताओं को याद किया जाना स्वाभाविक है। नागार्जुन माटी के कवि हैं। सामान्य मानव की पीड़ा का वर्णन करना उनका अभीष्ट है। 'अकाल और उसके बाद' उनकी प्रसिद्ध कविता है जो मानवीय संवदेना को झकझोरती है–

"कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उसके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।
दाने आये घर के अन्दर कई दिनों के बाद

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

धुँआ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घरभर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद।''[20]

आज जैसे भीषण महामारी है, उसी तरह अकाल पड़ने पर मनुष्य ही नहीं, सामान्य जीव–जन्तु की क्या क्या दशा हो जाती है, बहुत ही संवेदनापूर्ण चित्रण किया है। उनकी अन्य कवितायें भी ग्रामीण जीवन के परिदृश्य को प्रतिविम्बित करती हैं। जैसे 'पछाड़ दिया मेरे आस्तिक को' तथा 'बादल को घिरते देखा है' कविता में ग्रामीण जीवन अपना सम्पूर्णता के साथ उपस्थित होता है। फसलों और बादल का बड़ा गाढ़ा नाता है। किसान बादल को देखकर क्यों प्रसन्न होता है? 'सिन्दुर तिलकित भाल' में अन्नदाता किसान के प्रति अपने भाव व्यक्त करते हुए लिखते हैं–

''धन्य वे जिनकी उपज के भाग
अन्न–पानी और भाजी–साग
फूल–फल और कन्द–मूल, अनेक विध मधु मांस
विपुल उनका ऋण, सधा सकता न मैं दशमांश
ओह, यद्यपि पड़ गया हूँ दूर उनसे आज
हृदय से पर आ रही आवाज
धन्य वे जन, वही धन्य समाज।''[21]

केदारनाथ अग्रवाल मूलत' मार्क्स के द्वन्दात्मक भौतिकवाद से प्रभावित होकर मार्क्सवादी कवितायें लिखते थे। कालान्तर में इनकी कविताओं में गरीबों, शोषितों, वंचितों की पीड़ा का समावेश हुआ। पूंजीपतियों तथा शोषितों दोनों को आमने–सामने लाकर गरीबों तथा श्रमिकों के अदम्य स्वाभिमान को व्यंजित करते हैं–

''कमाकर/रोकर–हाथ जोड़कर' पाँव पूजकर/दया–भीख से/ नहीं कमाते अपनी रोटी।' वह दिनभर/मेहनत करते है;/ पत्थर लोहे से लड़ते हैं,/ लड़ते–लड़ते घिस जाते हैं,। घिसते–घिसते गिर जाते हैं,। तब पाते हैं,/ अपनी रोटी, अपना चिथड़ा/ अपना दरबा!/ उनके शोषक पूँजीपति हैं,/ जो उनकी मेहनत की पूँजी/ अपने बैंको में धरते है;/ जो उनके पौरूष–प्रतिभा को/जल्दी–जल्दी चर जाते हैं,। मोटे होकर इतराते हैं,/ और उन्हें मुरदा करते हैं!''[22]

केदारनाथ किसानों की दुर्दशा, उनकी आगामी पीढ़ी के भविष्य को भी अंकित करते हैं। भारतीय किसान जो अपने श्रम और त्याग से फसलें उगाता है, गायें पालता है, भैंस पालता है, दूध दुहता है, फलोत्पादन, सब्जीउत्पादन, सभी प्रकार के अन्न का उत्पादन करता है अपने द्वारा दिये गये टैक्स से हाकिमों को सुख–सुविधा प्रदान करता है, उसी किसान की पुस्त–दर–पुस्त कैसी दीन–दशा में रहती है। जब एक किसान की मृत्यु होती है तब वह उत्तराधिकार में अपने बेटे को क्या सौंपकर जाता है। उसका हृदय विदारक दृश्य देखिए–

''जब बाप मरा तब यह पाया
भूखे किसान के बेटे ने
घर का मलबा, टूटी खटिया
कुछ हाथ भूमि–वह भी परती।
बनिया के रूपयों का कर्ज
जो नहीं चुकाने पर चुकता।
दीमक, गोजर, मच्छर, माटा
ऐसे हजार सब सहवासी
बस यहीं नहीं, जो भूख मिली
सौगुनी बाप से अधिक मिली।''[23]

केदारनाथ की कविताओं में खेतों, खलिहानों, फसलों के विविध चित्र उभरते हैं। खेत के सौन्दर्य का भी बहुत ही भावात्मक एवं रसात्मक सौन्दर्य अंकित करते है। 'खेत का दृश्य' शीर्षक कविता में ग्रामीण जीवन का चित्र देखिये–

''आसमान की ओढ़नी ओढ़े
धानी पहने,
फसल धँधरिया,
राधा बनकर धरती नाची
नाचा हँसमुख
कृषक सँवरिया।
माती थाप हवा की पड़ती
पेड़ों की बज
रही ढुलकिया
जी भर फाग पखेरू गाते
ढरकी रस की
राग–गगरिया।''[24]

केदार जी शब्द एवं प्रतीक भी प्राकृतिक क्षेत्र से ही चुनते हैं। जैसे–बेला, बादल, धान, गेहूँ, चना, आग आदि प्रतीक। 'धूप' केदार जी का बहुत प्रिय विषय है। क्योंकि वह अँधेरे के नहीं, उजास के, आस्था के, संघर्ष के, कर्म के कवि हैं। उनकी ये भावनायें 'बसन्ती हवा', 'वीरांगना', किसान से कविता में व्यक्त हुई है। किसानों को ललकारते हुए कहते हैं–

''जल्दी–जल्दी हाँक किसनवा
बैलों को हुरियाये जा।
युग की पैनी लौह कुसी को।
'भुँई' में खूब गड़ाये जा।
पुरखों के हड्डी के हल को
आगे आज बढ़ाये जा।
वैभव को सूने खेतों की
छाती चीर दिखाये जा।''[25]

'बसन्ती हवा' कविता का दृश्य देखिए–

''हवा हूँ, हवा, मैं बसन्ती हवा हूँ।
चढ़ी पेड़ महुआ, थपाथप मचाया
गिरी धम्म से फिर, चढ़ी आम ऊपर
उसे भी झकोरा, किया कान मे 'कू'
उतरकर भागी मैं हरे खेत पहुँची–

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

वहाँ गेहुँओं में लहर खूब मारी
पहर दो पहर क्या अनेकों पहर तक
इसी में रही मैं।''[26]

अरूण कमल का कविता संकलन 'नये इलाके में' बहुत प्रसिद्ध रहा है। इसके लिए इन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है। परन्तु उनकी सबसे संवेदनापूर्ण कविता है– 'श्राद्ध का अन्न'।

गाँव में जब किसी व्यक्ति की तेरहवीं का संस्कार होता है तब गाँव के लोग, गाँव का दृश्य कैसा होता है। उसका भावपूर्ण चित्रण किया है–

''कठिन है निगलना श्राद्ध का अन्न
पाँत में बैठना
फिर परोसन का इन्तजार करना
फिर कौर उठाना सामने मृतक के पिता के
कठिन है कंठ के नीचे उतारना
कोई दोनों हाथों से ठेल रहा है निवाला
अवरूद्ध है कंठ
मुँह चल नहीं पाता
बरौनियाँ हिल नहीं रहीं
पालथी में भर गयी जाँघ
सामने खड़ा है मृतक हँसता
पूछता, कैसी है बुँदिया कैसा रायता?''[27]

यह सभी कवितायें 1900 के बाद लिखी गई हैं। कुछ देश की आजादी के पहले और कुछ देश आजाद होने के बाद। गाँवों की हर व्यवस्था का चित्रण कवियों ने अपनी कविताओं में किया है। वर्तमान समय में बदलते हुए परिवेश में, सबसे ज्यादा गाँव प्रभावित हो रहे हैं। वहाँ का सामाजिक, आर्थिक ढाँचा प्रभावित हो रहा है। अब सोचने, समझने की बात यह है कि अब गाँवों की जनसंख्या में भी भारी वृद्धि हो चुकी है। गाँवों में रोजगार के साधन नहीं हैं। जिससे मजबूर होकर मजदूरें का पलायन शहरों की तरफ होता है। कभी वर्षा न होने से या कभी अधिक वर्षा होने से फसल खराब हो जाती है। अब तो फसलों में कीड़े बहुत लगते हैं, जिससे खेती में लागत अधिक लगती है और लाभ कम मिलता है। ऊपर से जमीन में तो वृद्धि हुई नहीं है। जनसंख्या में भारी वृद्धि हुई है। खेतों में खेती करने लायक जमीन ही अब बहुत कम बच रही है। बड़े किसान अब रहे नहीं। जमीन बँटते–बँटते सभी किसान अब छोटे किसान या मजदूर बनते जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में कृषि आधारित उद्योग–धन्धों का विकास करके ही गाँवों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाया जा सकता है। महात्मा गाँधी के सिद्धान्तों, विचारों को अपनाकर ही गाँवों को समृद्ध किया जा सकता है। ग्राम स्वराज, कुटीर उद्योग, हस्तकला, मूर्तिकला, काष्ठकला, कौशल विकास के द्वारा आर्थिक उपार्जन का माध्यम मजबूत बनाया जा सकता है। कोरोना महामारी के बाद गाँवों की आर्थिक सामाजिक, स्वास्थ्य सुविधाओं में वृद्धि की आवश्यकता है। शिक्षा सुविधा को, उस ढाँचे को और मजबूत किये जाने की आवश्यकता है। क्योंकि जब किसान, मजदूर की पीढ़ी शिक्षित होगी, तब वह अपने लिए न्याय का दरवाजा ढूँढ़ लेगी। सरकार की जिम्मेदारी है कि अब किसानों का शोषण न हो, सामान्य मानव जीवन सामान्य ढंग से चल सके। समाज के आर्थिक रूप से मजबूत लोगों का भी कर्त्तव्य है कि जिनके पास रोजगार नहीं है, उन्हें रोजगार देकर उनके जीवकोपार्जन में सहयोग प्रदान करें।

सन्दर्भ सूची

1. शर्मा, राम विलास, सं0 निराला–राग विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 118–119
2. वही, पृ. 56
3. वही, पृ. 140
4. शर्मा, प्रो. राम किशोर, सं0 आधुनिक काव्य, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 64
5. वही, पृ. 67
6. वही, पृ. 73
7. वही, पृ. 81
8. वही, पृ. 84
9. वही, पृ. 85
10. वही, पृ. 88
11. वही, पृ. 88
12. वही, पृ. 89
13. वही, पृ. 96
14. वही, पृ. 96
15. वही, पृ. 97–98
16. वही, पृ. 111–112
17. वही, पृ. 125
18. वही, पृ. 128
19. वही, पृ. 128–129
20. काव्य संग्रह, आनन्द प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 36
21. शर्मा, प्रो0 राम किशोर (सं0), आधुनिक काव्य, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 141
22. वही, पृ. 143
23. वही, पृ. 144
24. वही, पृ. 147
25. वही, पृ. 158
26. वही, पृ. 155
27. काव्य संग्रह, आनन्द प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 67

© RRIJM 2015, All Rights Reserved